विशुद्ध राष्ट्रवाद को समर्पित प्रमुखतः विचार पाक्षिक

शुल्क आदि सहयोग देकर, 'हिन्दु अस्मिता' को अधिक सशक्त एवं प्रभावी बनाने में अपना योगदान दीजिए। धन नकद, मनीआर्डर/बैंक ड्राफ्ट द्वारा निम्न पते पर भेजिए।

वार्षिक शुल्क रुपया चालीस। संस्था, संगठन, ग्रन्थालय, वाचनालयों के लिए सुविधा शुल्क वार्षिक रुपया 40 केवल।

विक्रम गणेश ओक

16, एम. आय. जी. (शॉप कम रेसीडेन्स) नन्दानगर, मेनरोड इन्दौर (म.प्र.) 452 08

वर्ष 1 अंक 8, सोमवार, भाद्रप्रद शुक्ल 8, संवत् 2048/शके 1 13/दि. 16 सितम्बर 1991 संपादक विक्रम गणेश ओक (विक्रमसिंह) पृ. 4 मूल्य 1.50 पैसे वार्षिक रु. 40

हम सब है इस पाप के भागी!

देश में सत्तारूढ़ कांग्रेस ने 23 अगस्त को अन्ततोगत्वा लोकसभा में उपासना स्थल (विशेष उपबन्ध) विधेयक प्रस्तुत कर ही दिया। इस विधेयक की प्रस्तुति को लगता है देश ने एक सामान्य घटना के रूप में ही लिया है। न प्रस्तुतकर्ता पक्ष ने कूटनीतिक बाजी मारने पर कोई खास प्रसन्नता का प्रदर्शन किया और न हिन्दुवादी कहलाने वाले दलों-तत्वों ने कोई पाँचजन्य फूंका। इसके अनेक कारण हो सकते हैं। एक तो 'देश का दूसरा विभाजन' की अपराध संज्ञा को प्राप्त यह विधेयक कोई अकस्मात ही प्रकट नहीं हुआ है। 1947 में देश का जो विभाजन हुआ था वह यथार्थ में हिन्दुओं के साथ इस रूप में विश्वासघात था कि कुछ ही समय पूर्व हुए निर्वाचनों में कांग्रेस ने 'अखण्ड भारत' की घोषणा पर विजय पाई थी।

गांधीजी ने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि विभाजन यदि होगा तो वह मेरी छाती पर होगा। पर इस दूसरे विभाजन के संबंध में कांग्रेस पर इस प्रकार के विश्वासघात का आरोप लगाया नहीं जा सकता क्योंकि अपनी संस्कृति के अनुसार वह आरम्भ से ही 15 अगस्त 1947 की यथास्थिति की घोषणा के रूप में यवनों की चरणवंदना में रत रही है।

अपने निर्वाचन घोषणापत्र में भी उसने इसे प्रमुखतः से स्थान दिया था। 11 जुलाई को राष्ट्रपति द्वारा संसद के दोनों सदनों के संयुक्त अधिवेशन के उदघाटन भाषण में भी एक व्यावहारिक घोषणा के रूप में इसे प्रस्तुत किया गया था। इस विषय में तथाकथित धर्मनिरपेक्षवादी दलों की भूमिका कांग्रेस की भूमिका से आरम्भ से ही अभिन्न रही है। दूसरी ओर हिंदुत्ववादी कहलाने वाले दल है। इनके नेताओं की भूमिका का वस्तुनिष्ठ अध्ययन प्रस्तुत विषय के संदर्भ में देश की दुर्भाग्यपूर्ण उदासीनता के रहस्य का उदघाटन सहज ही करता है।

भाजपा के वरिष्ठ नेता श्री अटलबिहारी वाजपेयी ने अगस्त 1989 में मार्क्सवादी नेता श्री हीरेन मुखर्जी को पत्रोत्तर में लिखा था "अयोध्या की स्थिति मथुरा और वाराणसी की स्थिति के समान नहीं है। दूसरी जगहों पर सामान्य ढंग से पूजा होती है जो कि किसी तरह के समझौते के तहत हो रहा है। अगर रामजन्म भूमि-बाबरी मस्जिद के सिलसिले में कोई आपसी समझौता सम्भव हो तो इस आंदोलन से जुड़े लोगों से यह आग्रह किया जा सकता है कि वे मथुरा और वाराणसी को अयोध्या से न जोड़ें।"

भाजपा के दूसरे चोटी के नेता श्री लालकृष्ण आडवाणी ने 13 अगस्त 90 श्रीकृष्ण जन्माष्टमी को दिल्ली में आयोजित 'हिंदु टेम्पल्स व्हाट हेपण्ड टू देम' पुस्तक के लोकार्पण कार्यक्रम में अपने उद्बोधन में कहा था-"यदि मुस्लिम नेता अयोध्या में राम मन्दिर के निर्माण के लिए सहमत हो जाए तो वे काशी और मथुरा के विवादास्पद धर्मस्थलों जहां की आज भी नवाज अदा की जाती है, मस्जिदें हटाने पर जोर नहीं देंगे और भाजपा विश्व हिंदु परिषद और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से यह कहेंगे कि वे धर्मस्थलों को मुक्त कराने की बात अयोध्या के विवादास्पद धर्मस्थल (जहाँ 1936 से नवाज नहीं पढ़ी गई) से आगे न बढ़ाये।"

भाजपा नेताओं के मन में मंदिरमुक्ति का जो चित्र था वह अटलजी द्वारा 6 फरवरी 91 को 'जेंटलमेन' पत्रिका के मानेक डाबर को दिये साक्षात्कार में पारदर्शी रूप में इन शब्दों में स्पष्ट कर दिया गया था कि "1989 में भाजपा के घोषणा पत्र में अयोध्या का सिर्फ जिक्र था।"

मंदिर मुक्ति के सम्बन्ध से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण मानी जाती है। रा.स्व. संघ के सर-संघचालक श्री बाला साहब देवरस के अनुज तथा संघ के वरिष्ठ अधिकारी 75 वर्षीय श्री भाऊराव देवरस ने राजस्थान के मुख्य-मंत्री भाजपा नेता श्री भैरोंसिंह शेखावत के सहयोग से जावेद हबीब आदि मुस्लिम नेताओं की विश्व हिंदु परिषद नेताओं के साथ नवम्बर 1990 में तीन बैठकें सम्पन्न करवाई थी (सण्डे आब्जर्वर 30-2-90) इन बैठकों के माध्यम से समस्या समाधान के रूप में श्री भाऊराव देवरस ने तीन मंदिरों के निर्माण की माँग के बजाय एक राम मंदिर निर्माण की माँग तक ही खुद को सीमित कर लिया था। अयोध्या के अलावा दो अन्य मंदिर मथुरा और काशी विश्वनाथ के निर्माण को छोड़ देने का आश्वासन खुद श्री देवरस ने पिछले दिनों प्रधानमंत्री चंद्रशेखर को दिया था। (सण्डे आबजर्वर 6.1.91)।

सण्डे आबजर्वर से बातचीत में श्री शेखावत ने स्वीकार किया कि अयोध्या विवाद में मध्यस्थ की भूमिका उन्होंने तत्कालीन प्रधानमंत्री चंद्रशेखर के आग्रह पर स्वीकार की थी। श्री शेखावत ने पूरे विश्वास के साथ दावा करते हुए बताया कि अगर अचानक लोकसभा चुनावों की नौबत नहीं आती तो अयोध्या विवाद का स्वीकार्य हल निकल आता। पर श्री शेखावत उक्त फार्मूले को गोपनीय बताते हुए पुनः पुनः टालते रहे। (सण्डे आबजर्वर 11.8.91)।

रा.स्व. संघ की मात्र एक मंदिर तक पीछे हटने की भूमिका की पुष्टि हेतु इलस्ट्रेटेड वीकली 26 जनवरी 1991 में प्रकाशित तथा आर्गनायजर में पुनः प्रकाशित श्री अटलजी के साक्षात्कार के इस कथन से निःसंदेह हो जाती है कि "मैं गारंटी देता हूं कि यदि राम जन्मभूमि प्रकरण का निर्णय हो जाता है तो रा.स्व. संघ नेतृत्व अग्रसर होकर प्रकट रूप में कहेगा कि हम अब मथुरा और वाराणसी के विवाद को आगे नहीं बढ़ायेंगे।"

यह माना जा सकता है कि विश्व हिंदु परिषद भाजपा से सीधे किसी आदेश-निर्देश को स्वीकार न करती हो पर जहाँ तक रा.स्व. संघ का प्रश्न है विहिप उसके मार्गदर्शन और निर्देशन में ही सारा कार्य कर रही है। और न ही विहिप में ऐसी कोई शक्ति है जो संघ नेतृत्व को किसी भी बात पर आव्हान दे। वैसे भी विहिप नेता 1987 से कहते रहे हैं "अयोध्या, मथुरा एवं वाराणसी के तीर्थस्थलों की मुक्ति के बाद किसी अन्य मस्जिद पर हिंदु अपना दावा नहीं करेंगे: अशोक सिंहल (पांचजन्य 10 मई 1987)।

इन्हें अब सरलता से समझाया जायेगा कि किसी भी प्रश्न के समाधान हेतु कुछ त्याग भी करना पड़ता है और वह त्याग होगा मथुरा, काशी का! जहाँ तक हिंदु महासभा का प्रश्न है वह मात्र श्री रामजन्म भूमि हेतु न्यायालय में खड़ी है जो प्रश्न संदर्भित विधेयक से अलग है और सर्वधर्म स्थल मुक्ति हेतु यदा-कदा प्रस्ताव पारित करने के अतिरिक्त और कुछ कर न सकी।

इस समग्र पृष्ठभूमि पर जनतांत्रिक प्रणाली रुपी धर्मयुद्ध में लोकसभा में धर्मनिरपेक्षतावादी और इस्लामी कुल 380 मतों के सम्मुख भाजपा-शिवसेना की 124 मतों की शक्ति की पराजय अटल है।

स्वयं को हिंदुत्ववादी कहलाने वाली भाजपा कुल की राजनीति के और हिंदु महासभा नेतृत्व की अकर्मण्यता के, इससे भिन्न परिणाम और कुछ हो ही नहीं सकते थे। इसीलिए धर्म-निरपेक्षतावादी इसे यदि पाप समझते ही नहीं तो हम लाख उन्हें पाप के भागी कहे। पर यदि हममें साहस है तो कहना होगा कि हम भी है इस पाप के भागी। हमें अपनी पराजय को एक वीर की भांति स्वीकारना चाहिए। 'क्षमा वीरस्य भूषणम्' का प्रचलित अर्थ होता है-'क्षमादान वीर का भूषण' है।

हमारी दृष्टि में क्षमा याचना जिस समाज का नेतृत्व हम करते है उससे क्षमा याचना भी वीर का लक्षण है। इसीलिए महामहिम राष्ट्रपति महोदय को 27 सितम्बर 1989 को लिखे पत्र (पत्र आगामी अंक में) के परिप्रेक्ष्य में हम हमारी पराजय को स्वीकार कर हिंदु जन-जन से क्षमा याचना करते हैं। पर इसी के साथ हम यह भी स्पष्ट करते हैं कि हमारी यह पराजय धार्मिक स्वतंत्रता हित युद्ध में नहीं, तो मात्र एक लड़ाई में भर हुई है और युद्ध अविरत रहेगा।

उपरिवर्णित इलस्ट्रेटेड वीकली को दिए अटलजी के साक्षात्कार में उन्होंने स्पष्ट किया है कि "मथुरा, काशी का प्रकरण अब अवश्य नहीं उठाएंगे पर भविष्य की समस्त पीढ़ियों के लिए हम वचनबद्ध नहीं हो सकते।" तो आइए पराजय की इस घड़ी में संकल्प करें कि जिस भांति राजनीतिक स्वतन्त्रता हेतु भूतकाल की पीढ़ियों ने प्रदीर्घ काल तक संघर्ष किया उसी भांति धार्मिक स्वतंत्रता हेतु हमारा युद्ध अविरत रहेगा। फिर कितना भी समय क्यों न लगे, कितना भी बलिदान क्यों न लेना पड़े।

पूर्व की बलदानी पीढ़ियों क्षुद्र स्वार्थपरायणता और निष्क्रियता के हमारे प्रमादों के लिए हमें क्षमा करो हम इस इतिहास की पुनरावृत्ति नहीं होने देंगे। ऐ भावी पीढ़ियों हम हमारे पूर्वकृत पापों का परिमार्जन कर आपके लिए उज्ज्वल इतिहास की धरोहर रखेंगे।

—रामशास्त्री

"अखिल हिन्दुराष्ट्र भाषा के स्थान पर प्रतिष्ठित होने के लिये हिंदी ही सबसे अधिक पात्र है। हिन्दी कोई किसी मांग की पूर्ति हेतु बनाई गई राष्ट्रभाषा नहीं है अंग्रेज ही नहीं तो मुसलमानों के हिंदुस्तान में आने के पूर्व ही सर्वमान्य स्वरुप की हिन्दी हिन्दुस्तान की राष्ट्रभाषा के स्थान को प्राप्त कर चुकी थी, यह एक वास्तविकता है। हिंदुतीर्थ यात्री, व्यापारी, सैनिक और पंडित जब बंगाल सिंध या काश्मीर से रामेश्वर यात्रा करते थे तब से भिन्न-भिन्न प्रांतों में हिंदी की सहायता से अपना आशय व्यक्त करते। जिस प्रकार प्रबुद्ध हिन्दु विश्व की राष्ट्र भाषा संस्कृत थी, उसी प्रकार कम से कम विगत एक हजार वर्ष से हिन्दुजन को प्रचलित राष्ट्रभाषा हिन्दी रही है।"

—वीर सावरकर

मां की पाती

प्रिय सपूतों,

शुभाशीष ! हां ! मैं तुम्हारी माता हूँ, जननी हूँ, विमाता नहीं, दायी नहीं। मैंने तुम्हें गर्भरूप में पाला है। दुग्ध-पान कराकर पोषण किया है। मैंने तुम्हारी विविध सेवा की है। इसलिए कि उस परमशक्ति ने मुझे वात्सल्य के तत्व से संपूरित किया है। जो तुम्हारी सर्वांगीण उन्नति हेतु मुझे सतत प्रेरित करते रहता है। मैं वैसे तुमसे कोई किसी प्रकार की इच्छा अभिलाषा नहीं रखती। मात्र इतनी आकांक्षा अवश्य है कि उस परमशक्ति ने मनुष्य योनी में जीवन का यह जो महत् अवसर तुम्हें दिया है उसे तुम सार्थक करो। इस चराचर की मानवजाति की अपने राष्ट्र-समाज की सेवा करो। इसी में मेरे स्तन्य का सम्मान है मातृऋण से तुम्हारी उऋणता है !

इस स्वर्गादपि गरीयसी भारतभूमि में जन्म लेने पर मुझे असीम गर्व है। पर इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि इस विश्व की मेरी बहनों से मुझे कोई द्वेष या ईर्ष्या है। मैं उनके वैभव और समृद्धि की कामना करती हूं और ए मेरे आत्मजों तुम भी उनसे स्नेह रखो, उनका सम्मान करो। पर हां माता और मौसी पद में जो अन्तर हैं उसे कभी विस्मृत न करना। कोमल हृदय के लिये 'माता' से श्रेष्ठ उपमान किसी को भी स्वीकार्य नहीं। पर माया के वशीभूत इस लौकिक विश्व में परिस्थितिवशात् ब्रज न सही पर लोह समान कठोर होना मेरी अपरिहार्यता है। इसी कारण मैं मार्गभ्रष्ट, स्वार्थांध मेरे ही कतिपय पुत्रों से कहने में विवश हूं कि सत्ता संपत्ति की इस माया की मोहिनी के पाशों में स्वयं आबद्ध होकर परोक्षरूप से ही क्यों न हो, पर मुझे आबद्ध करने के पाप के भागी न बनो। क्यों तुम्हें विश्वास नहीं कि, मेरा उद्भव अनुलोम या प्रतिलोम किसी प्रकार के संकर से नहीं-मेरा जन्म किसी बाजारमें नहीं, तो इस देवताप्रिय पुण्य भारत भूमि में देववाणी संस्कृत के कुलीन परिवार से हुआ है। इस भूमि की अन्य भाषाएं मेरी सहोदरा हम एक हैं, हमारे समस्त आत्मज तुम एक हो। हमारा रक्त एक है, हमारा प्राण एक, चर्मचक्षुओं के लिए अनेक होंगे, अन्तरचक्षुओं के लियेएक हो। हिन्दुओं का यह प्राचीन राष्ट्र एक है, जैसो 'एको देवः सर्वभूतेषु गूढः।

हे सुपुत्रों तुम्हारे लिऐ मेरी यही कामना है और परम शक्ति से प्रार्थना भी कि,

मा अस्तंगमस् त्वंरूपणो विश्वयस्व स्वकर्मणा।
मा मध्ये मा जघन्ये त्वं माडधो भूःस, तिष्ठ गर्जितः।

तुम्हारी माता
राष्ट्रभाषा हिन्दी
जय हिंदु राष्ट्र

निज भाषा उन्नति

(पेज 4 से जारी)

इकबाल और स्वदेशी चिकित्सा प्रणाली आयुर्वेद के विख्यात चिकित्सक भोजनोपरान्त, के स्थान पर 'भोजनाबाद' जैसे शब्दों का प्रयोग करने लगे।

कहना अनावश्यक है कि राष्ट्र भाषा के सम्बन्ध में ये तथा इस तरह के अनेक प्रमाण यह सिद्ध करते हैं कि स्थिति चिंताजनक और चिन्तनीय है। चिंतन के लिए कभी-कभार 'हटाओ जुटाओ' सम्मेलन हो तो आपत्ति नहीं। परन्तु इससे अधिक आवश्यकता है प्रत्यक्ष कार्यक्षेत्र में उतरने की। हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि मुक्त प्रकृति मे मिश्रण-अपमिश्रण होते ही रहता है। पर इसीलिये तो प्रकृति ने शोधन-शुद्धि-करण की व्यवस्था को भी सम्पूर्ण चक्र में स्थान दिया है।

आकाशात् पतितम् तोयं यथागच्छति सागरं......में पंचमहाभूतों में से जल-तत्व की शुद्धि को बडी ही स्पष्टता से हम समझ सकते हैं। हिंदी के वृतियों को चाहिये कि वे भी प्रकृति के इस आदर्श को सम्मुख रख सतत प्रयोग की अवस्था में भाषामें होने वाले अपमिश्रण को दूर करने सीमित करने की सतत प्रक्रिया अपनाये।

अन्त में एक बात और 'स्थिति चिंताजनक है' कहकर मुंह लटका कर बैठने से हताश होने से कोई सुधार सम्भव नही और जो कुछ सम्मुख हैं और उसके लिये हम जिन तत्वों को दोषी समझते हैं उन्हें कोसने से भी समस्या का कोई समाधान तो है नहीं। हमारी दृष्टि में आज की स्थिति में समस्या का समाधान तो यही है कि हमारी सर्वांगिण उन्नति के लिये हमारी निज भाषा-राष्ट्रभाषा हिंदी के उत्थान और विकास के लिये अर्थात् उसे यथार्थ में राष्ट्रभाषा का सम्मानित स्थान प्रदान करने के लिये हम नये सिरे से कार्य करें।

यह सोचकर पुनरारम्भ करे कि 44 वर्ष पूर्व अर्जित राजनीतिक स्वाधीनता ने अन्यान्य स्वतन्त्रताओं का जो महाद्वार मुक्त किया है उसमें हम आज अब प्रवेश कर रहे है। 'गतं न शोच्य' की भावना से अब हम एक नई पट्टी पर हिंदी को राष्ट्र भाषा की गरिमा प्रदान करने का श्रीगणेश करे।

शुक्लपक्ष समारंभः कृष्णपक्षातदनन्तरम्

हटाओ वाले . .

(पेज 3 से जारी)

के तीसरे दिन के साढ़े ग्यारह बजे हीं उनसे कमरा खाली करवा लिया। श्री सावरकर को कोई प्रसिद्धि नहीं दी गई। दूसरे दिन वक्ताओं की भीड़ में थोड़ा समय अवश्य दिया गया।

परिवारवाद, अव्यवस्थाएं आदि भी तब भुला दी जाती हैं जब आयोजक अपने पवित्र उद्देश्य के प्रति समर्पित होता है। सम्मेलन के दूसरे दिन सम्मेलन के आयोजक आंदोलन के अध्यक्ष श्री जगदीश वैदिक ने अपने लंबे भाषण में अंग्रेजी हटाओ सम्मेलन की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालते हुए कहा था कि---

'चार वर्ष पूर्व मैंने अकेले ही यह संकल्प लिया। करीब 1500 लोगों से पत्रव्यवहार किये। पहले सोचा था आर्य समाज यह कार्य हाथ में ले लेकिन वहां से निराशा हाथ लगने पर मैंने अकेले में ही यह कार्य शुरू किया। मेरा पुत्र वेदप्रताप मेरे लिए प्रेरणा जरूर बना लेकिन सम्मेलन की योजना मेरी अपनी है। हमने अंग्रेजी हटाने के लिए इन्दौर को आंदोलन का केन्द्र बनाने का संकल्प किया है। यह आंदोलन अब सतत् चलेगा और सारे देश में जनजागरण करके लोगों की मानसिकता को बदलने का प्रयास किया जाएगा। हम राज्य सरकारों को तथा केन्द्र सरकार को बाध्य करेंगे कि वे राजकाज से अंग्रेजी को हटाएं। हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं को उनका सम्मान व गौरव प्रदान करें। इसके लिए हम सत्याग्रह करेंगे और जेल भी जाएंगे। इंदौर के बाद अब हर प्रांत में अंग्रेजी हटाओ आंदोलन होंगे। जिंदगी के शेष समय में अब मैं घर-परिवार के नहीं हिंदी के काम आऊंगा यह संकल्प लेता हूं।'

पर इस संकल्प की पूर्ति हेतु श्री वैदिक अपने घर-परिवार के नहीं तो हिंदी के काम आने हेतु मात्र एक बार बाहर निकलने का समाचार पढ़ा-देखा और वह था नगर की एक संस्था 'मंथन' द्वारा विगत वर्ष हिंदी दिवस समारोह में श्री जगदीश प्रसाद वैदिक का अभिनंदन पत्र भेंट कर सम्मान। हो सकता है कि इस वर्ष भी हिंदी दिवस पर श्री वैदिक इसी तरह हिंदी सेवा हेतु बाहर निकलें।

'अंग्रेजी हटाओ सम्मेलन' के अनंतर के एक वर्ष में इंदौर में उभरे सिटी प्राईड, इंटर कॉंटी जैसे प्रतिष्ठानों के नाम-पर और 'अहिल्या टॉवर' और उसके शिरमोर देवी अहिल्या विश्वविद्यालय में अंग्रेजी बोलचाल हेतु डिप्लोमा और सर्टीफिकेट कोर्स सम्मेलन वालों तथा अन्य हिंदी सेवकों के लिए चिन्तनीय होने चाहिए और विचारणीय होने चाहिए। अंग्रेजी हटाओ सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष, विख्यात साहित्यकार, पत्रकार स्वर्गीय डाक्टर प्रभाकर माचवे के पीड़ा व्यक्त करने वाले अक्षर 'अंग्रेजी हटाओ सम्मेलन के हम स्वागताध्यक्ष थे परंतु नाममात्र के।'

कई विचार और इच्छाएं 'मन की मनही मांहि रही।' संस्कृत में लोकोक्ति है कि न करने से 'मंद करणं श्रेयः।' जो हुआ वह हमारे मित्र वेदप्रताप वैदिक के बुद्धिबल और मनोबल से बहुत अच्छा हुआ। उनके पिता का इस उम्र में युवकोचित उत्साह बहुत अनुकरणीय है। परंतु अपने वात्सल्य प्रेम का सार्वजनिक प्रदर्शन अंग्रेजी हटाने में बहुत आवश्यक नहीं था। न अपने प्रखर मतवाद और हर भाषण पर टिप्पणी का। अतिथि सम्मान वैदिक मूल्य है।

जब सब तरह के लोग बुलाते हैं तो दूसरों की बात सुनने का धैर्य और उदारता भी श्रोताओं से अपेक्षित होती है। मंच पर भी। सम्मेलन की असफलता, आलोचना या अक्षमताओं के हम भी आंशिक सहभागी हैं।'

पत्र पापा के नाम

14 सेप्टेंबर 1991

माई डीयर पापा,

रीसपेक्ट। आप का पीछला लैटर भौत लेट याने कल मीला। एक तो रैनी सीजन की वजह से डाक देर से आती है और कहा जाता है कि हमारी स्कूल में कुछ लफड़ा हो गया हैं। इसलिये हमें लैटर्स डाइरेक्ट नहीं मिलते। पहले हमारी मेथ्स की मैडम उनको पढ़ती हैं और चेक होकर हमें मि ती है। पापा आपका लैटर आने पर मैडम ने उनके क्वार्टर पर मुझे बुलाया। वहाँ हमारे इंग्लिश के सर भी बैठे हुए थे। मैडम ने आपके लैटर के साथ भेजा हुआ डीयर ग्रेण्ड पा का लैटर पढ़ा। उसमें लिखा है कि देश की सामान्य जनता हिंदी भाषी है सबका मिलकर एक राष्ट्र है और इसीलिए हिंदी हमारी राष्ट्रभाषा है। इतना सुनने पर इंग्लिश के सर ने इंटरप्ट किया और मुझे समझाया 'माई ब्वाय देखो ये ट्री होता है ना ट्री ! उसका लीफ ऑटमन में, वो क्या, हाँ, पतझर में एवरी ईयर सूख जाता हाई, गीर जाता हाई। पर ट्री का ट्रंक जब तक हाई तब तक ट्री में लाईफ रहता हाई। वेसा ही एवरी नेशन की ये सामानय जनता कामन पीपल लीव्ज हाई जो हीण्डी पाड़ती हाई, एण्ड इंग्लिश पाड़ने वाला तुम जैसा वार्ड इस नेशन का ट्रंक हाई। यू नो इंग्लिश इंटरनेशनल लेंग्वेज हाई हिंण्डी को कोई नहीं जान्टा हमारा प्रेसीडेन्ट भी नहीं।'

इतना कहते हुए सर हंसने लगे और मैडम ने ग्रेण्ड पा के लैटर की एण्ड में लिखा हुआ स्लोगन पढ़ा 'जाई हीण्डी जाई नागड़ी।' पापा अब तो मैं भी हंस दिया। पापा ग्रेण्ड पा को समझाओ न कि वे मुझे लैटर नहीं लिखें। हां यदि वे नहीं माने तो आप उनके लैटर को नहीं भेजें। यहां एक बार पूरी क्लास में जब से मैडम ने मुझे 'हीण्डीवाला' कहा है तब से सारे क्लासफेलो मुझे 'हीण्डीवाला हीण्डीवाला' कहकर टीज करते हैं। वैसे पापा मेथ्स की ये टीचरजी भी कुछ ऐसी ही हैं। हमारी स्कूल के सीनियर स्टूडेण्ड उन्हें देखकर स्माईल करते हुए धीरे से कहते हैं 'वन प्लस वन ईज ईक्वल टू थ्री।'

मेरी स्टडीज अच्छी चल रही है। पिंकी और गोल्डी को मेरा लव्ह। मम्मी से मेरी ओर से सोरी कहना कि इस बार इंग्लिश में लिखने का डेयर नहीं कर सका। अगली बार इंग्लिश में ही लिखूंगा और मम्मी को ही लिखूंगा। मम्मी को मेरे रीसपेक्टस, ग्रेण्ड पा को चरण स्पर्श। थेंक्स !

देवप्रिय (पप्पू) वशिष्ठ — यूअर्स
इंग्लिश डोमीनेन्ट स्कूल, ईसभूम — पप्पू

सूचना

प्राध्यापक विक्रम गणेश ओक (विक्रमसिंह) अस्वस्थता एवं अतिव्यस्तता के कारण दीपावली तक इन्दौर महानगर से बाहर के कार्यक्रमों में सम्मिलित नहीं हो सकेंगे।

-संपादक

दीपावली विशेषांक

विचारोत्तेजक लेख, शोधपूर्ण जानकारी, चुटीला व्यंग्य और अर्थपूर्ण चुटकुले, सब कुछ अर्थात मिलाजुला रसास्वादन-हिन्दु अस्मिता दीपावली विशेषांक शुक्रवार १ नम्बर १९९१ को प्रकाश्य।

हटाओ वाले हट गये अपने संकल्प से?

किस्सा रियासती युग का है। किसी सरदार ने बड़ी ही विनम्रता से श्रीमन्त से कहा "सरकार राज्य में बड़ी पोल चल रही है।" सरकार भी मस्त तबीयत के थे, उन्होंने सरदार से कहा 'तो तुम भी घुस जाओ उस पोल में ?' अब सरकार तो सरकार होती है सामंती हो या जनतंत्री !

इसीलिए मध्यप्रदेश में जहां एक ओर कुछ खिसियानी बिल्लियाँ नोचने के लिए खम्बे की तलाश में रही वहां चतुर खिलाड़ियों ने 14 मार्च 1990 को प्रबुद्ध वर्ग की बैठक आयोजित कर 'अंग्रेजी हटाने' की मानसिकता बनाने का वातावरण तैयार कर उसके विरुद्ध प्रचार का निर्णय लिया हिंदी के यथास्थान प्रतिष्ठित करने की बात की।

अब वातावरण बनाने के लिए खुले वातावरण में जनसम्पर्क, जनशिक्षा, जनप्रबोधन ये बातें पुरानी हो चुकी है। 'इंस्टेण्ट फुड' का युग जो है ! सो चतुर राष्ट्रभाषा भगतों ने 17 जून'90 को घोषणा कर दी कि मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान और हरियाणा ने अंग्रेजी की गुलामी से मुक्त होने के प्रयत्न आरम्भ कर दिए हैं और केन्द्र सरकार व अन्य राज्यों को विदेशी भाषा की गुलामी से मुक्त होने के लिए प्रेरित करने हेतु जनता की मानसिकता में बदलाव लाने के लिए इंदौर में तीन दिवसीय अखिल भारतीय अंग्रेजी हटाओ सम्मेलन होगा। और स्नेही पत्रकारो की अनुकम्पा से आये दिन समाचार पत्रों में 'अंग्रेजी हटाओ सम्मेलन' छपता रहा।

सम्मेलन के अध्यक्ष श्री जगदीश वैदिक ने इतिहास को निहारते हुए कहा कि "अंग्रेजो के विरोध में सम्मेलन हो 12 हो चुके हैं पर हुआ कुछ नहीं। अब ये अंग्रेजी हटाओ आंदोलन के दूसरे दौर का प्रथम अखिल भारतीय सम्मेलन होगा।"

ठीक तो है यदि यह तेरहवां सम्मेलन होता तो कहीं अंग्रेजी की 'तेरहवीं' हो जाती और फिर आगे सम्मेलन किस विषय पर करते ! सम्मेलन के अध्यक्षजी अब 'आंदोलन' के अध्यक्ष जैसी बातें करने लगे। "सम्मेलन हेतु 15 हजार से अधिक आमंत्रण पत्र (अंग्रेजी) भेजे जा चुके हैं। 2 हजार अतिथियों की स्वीकृति मिल चुकी है।

150 प्रमुख पत्रकारों को पत्र लिखे गए हैं। सम्मेलन पर दो लाख रुपये खर्च होंगे। 10 लाख रुपये का न्यास बनेगा। प्रति वर्ष अ.भा. सम्मेलन के अलावा प्रांतीय सम्मेलन भी आयोजित किए जाएंगे।

आंदोलन की गतिविधियां साल भर चलती रहेंगी। अंग्रेजी हटेगी तब जबकि हम सड़क पर उतर कर अंग्रेजी हटाने का संकल्प लेंगे। सर पर कफन बांधकर 'करो या मरो' का नारा लगाकर प्राणों की आहुति देने की तैयारी करेंगे।"

और आखिरकार 'करो या. मरो' के प्रहसन का दिन शनिवार 11 अगस्त 1990 आ ही गया। ढेर सारे मंत्री, सांसद, विधायक, नेतागण राष्ट्रीय सुविधाओं का लाभ उठाते हुए सम्मेलन में सम्मिलित हो गए थे। पर जनता ! वह तो सम्मेलन रूपी ऊंट के मुंह में जीरे के बराबर थी। इसीलिए इस सम्मेलन को 'नेताओं का सम्मेलन' कहा गया पत्रकारों द्वारा।

बड़ा भावुक दृश्य था, सम्मेलन की अध्यक्षता कर रहे थे पूर्व राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिह, प्रमुख वक्ता थे भाषा के संपादक श्री वेदप्रताप वैदिक और उनके पिता श्री जगदीश वैदिक नव-आंदोलन सम्मेलन के जनक, अध्यक्ष कल्पक, संयोजक सबकुछ !

नेहरू स्टेडियम (खेल प्रशाल नहीं) में आयोजित सम्मेलन का शुभारंभ उत्तरप्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री मुलायमसिंह यादव जिन्हें वेदप्रताप से 'पूरे देश में हिंदी के लिये शेर की तरह दहाड़ने वाला एकमात्र राजनैतिक' का अनन्य प्रमाण पत्र विगत दिनों ही प्राप्त हो चुका था, के करकमलों द्वारा अंग्रेजियत की शृंखलाओं से जकड़ी भारतमाता की प्रतिमा से शृंखलाओं को काटकर संपन्न किया गया।

उपस्थित लोगों में से एक ने बहुत ही संतोष भाव से कहा कि कितना सुखद प्रसंग है कि किसी महापुरुष के चित्र को माल्यार्पण करने मात्र से जो मूर्तिपूजा की कल्पना करता रहा वह निर्गुण-निराकार का अर्थक सगुण-साकार की पूजा कर रहा है आज ! प्रत्येक की अपनी दृष्टि होती है।

अपने उद्बोधन में इस उद्घाटन प्रसंग पर कटाक्ष करते हुए हिमाचल प्रदेश के मुख्यमंत्री शांताकुमार टके की बात कह गए 'लोहे की जंजीरें तोड़ने से कुछ नहीं होगा, मानसिक गुलामी भरे सोच की बेड़ियां काटनी होंगी।' पर कौन काटेगा मानसिक दासता की बेड़ियां।

क्या मुलायमसिंह जिनके बच्चे तो कांवेंट में पढ़ते हो पर अंग्रेजी हटाओ आंदोलन के मंच से पाखण्ड करें कि 'पब्लिक स्कूलों में पढ़े लिखे लोग ही ज्यादा बेइमान रहे है। फिर भले ही वे अफसर हो या प्रधानमन्त्री।' ऐसे पाखंडियों का हश्र देखिए सम्मेलन में आपने कहा था कि 'दरअसल अब दिल्ली से अंग्रेजी हटवाना है।' पर दिल्ली तो दूर लखनऊ से भी जनाब हट गये।

पूर्व राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिह ने अपने सारगर्भित भाषण में 56 अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग अवश्य किया पर उनका कथन बोधक था। उन्होंने बताया कि 'अंग्रेजी पड़ोसी महिला की तरह आंच लेने हमारे घर आई थी और घर की मालकिन बनकर बैठ

विवेक

गई है।' हिंदी भक्तों को उन्होंने परामर्श दिया कि 'जिन्हें हिंदी से बदबू आती है उन अंग्रेजी प्रेमियों से कड़वा न बोलें उन्हें प्रेम से समझाएं।'

प्रमुख वक्ता ने अपने प्रामुख्य को सूचित करने हेतु अपने उद्बोधन में गत दिवस प्रधानमन्त्री श्री विश्वनाथ प्रतापसिंह से हुई मुलाकात का ब्यौरा देते हुए बताया कि श्री सिंह ने उनसे कहा है कि वे अब विदेशी मेहमानों से वार्तालाप के दौरान हिंदी में ही बात करेंगे।

त्रिदिवसीय सम्मेलन का दूसरा दिवस 12 अगस्त रविवार का अवकाश दिन होने पर भी माता अहिल्या की महानगरी इन्दौर की जनता ने सम्मेलन में अपनी उपस्थिति नहीं दर्शायी। लोकसभा के पूर्व अध्यक्ष श्री बलराम जाखड़, अ. भा. हिंदू महासभा अध्यक्ष श्री बालाराव सावरकर आदि अनेक वक्ताओं ने इस सत्र में विचार रखे। पर समाचार पत्रों को उल्लेखनीय लगा डा. वेदप्रताप वैदिक का लंबा और ऊबाऊ संचालन और वह प्रसंग जिसमें कुछ लोगों द्वारा नेहरू स्टेडियम के अंग्रेजी नामपट्ट तोड़े जाने पर उन युवकों को डा. वैदिक द्वारा ऐसा करने से मना करना। डा. वैदिक ने जब युवकों से इस तरह का व्यवहार न करने का कहा तो उसकी प्रतिक्रिया में वाराणसी के गांधी विद्या संस्थान के डा. गौरीशंकर ने मंच पर चढ़कर कहा 'ये वैदिकजी ही थे जिन्होंने हमें 1 68 में बनारस में अंग्रेजी के नामपट्ट तोड़ने की प्रेरणा दी थी। आज वे ही हमें मना कर रहे हैं। सेवा में आने पर ऐसा बदलाव आ जाता है।' डा. वैदिक इसका क्या जवाब देते !

उनकी 'अंग्रेजी हटाओ : क्यों और कैसे ?' पुस्तिका का दूसरा संस्करण वहां 5 रुपये में बेचा जा रहा था। कमाल यह कि पुस्तिका महर्षि दयानन्द, महात्मा गांधी के साथ ही डा. राम मनोहर लोहिया को समर्पित है पर अन्दर पेजों में लोहिया के विचारो को अपना बताकर पेश करते हुए लिखा गया है कि 'अंग्रेजी को बनाये रखने और चलाये रखने के लिए जितने साधन जहां भी होंगे उन्हें बेरहमी से खतम करना, हटाना बेहद जरूरी है।'

अंग्रेजी अखबार, अंग्रेजी मुद्रक और दूरमुद्रक मशीनें इसी प्रकार के साधन हैं। इन्हें खत्म करने को हिंसा नहीं समझना चाहिए। इसी पुस्तिका के पिछले कवर पर डा. वैदिक के परिचय मे उन्हें भारतीय भाषाओं की लड़ाई का प्रतीक बताया गया है। ऐसी साक्षात लड़ाई को रोकने हेतु गेरूआवस्त्रधारी स्वामी अग्निवेश को आखिर हस्तक्षेप करना पड़ा।

सम्मेलन के समापन दिवस पर समाजवादी विचारक जॉर्ज फर्नाण्डीज, वरिष्ठ समाजवादी नेता मामा बालेश्वर दयाल आदियों ने सम्मेलन को लोहियावादी पुराना रूप देकर उसमें एक निखार ला दिया। पर जिस प्रकार विगत दिवस म.प्र. विधानसभा अध्यक्ष प्रो बृजमोहन मिश्र की गाड़ी राष्ट्रभाषा से रामजन्म स्थल तक पहुंचने के कारण नारेबाजी का दंगल हुआ उसी को दोहराते हुए जब नेता रघु ठाकुर बढ़ने लगे तो सुश्री उमा भारती ने साहस के साथ उन्हें रोका और कुशलता के साथ प्रतिक्रिया को भी होने नहीं दिया। और अन्त में जैसा कि सम्मेलनों में होता है एक सर्वसमावेशी प्रस्ताव पारित कर आयोजक धन्य हुए।

कहे बेटा [वैदिक], सुने पिता (वैदिक)

यह अति मुखर शीर्षक है एक प्रतिष्ठित पत्रिका के विशेष प्रतिनिधि द्वारा की गई 'अंग्रेजी हटाओ सम्मेलन' की समीक्षा का। एक प्रतिष्ठित पत्र ने इसी मुद्दे को प्रस्तुत करते हुए लिखा था 'आयोजकों को अखबार का भरपूर सहयोग मिला। इसके बावजूद यदि शहर के विद्वत समुदाय को (आयोजक) आकर्षित नहीं कर पाए तो इसका अर्थ क्या यह लगाया जाए कि हमारा विद्वत् समुदाय ऐसे आयोजनों से घोर निस्पृहता बरतने लगा हैं ? अथवा क्या यह अर्थ लगाएं कि आयोजकों ने शहर के सुधीजनों को विश्वास में लेने के समुचित प्रयास नहीं किए ?'

सम्मेलन के आरंभ में ज्ञानी जैलसिह ने जिस प्रकाशित स्मारिका का विमोचन किया उसके मुखपृष्ठ पर तो अंग्रेजी तथा अंग्रेजियत की बेड़ियों में जकड़ी भारतमाता का चित्र है। पर अन्तरंग में प्रमुखतः वैदिक परिवार ही छाया हुआ है।

इस सम्मेलन को सफल बनाने के मन्तव्य से गठित समितियों और उनमें खटकने वाले कार्यकर्ताओं का नामोल्लेख तक इस दस रुपये मात्र की 95 पृष्ठीय स्मारिका में न होना यही बताता है कि अंग्रेजी हटाओ सम्मेलन पर परिवारवाद छाया रहा। फलस्वरूप कार्यकर्ताओं में उदासीनता रही। वे अधमन में काय करते रहे। हिंदू महासभा के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री बालाराव सावरकर के संदर्भ में हमे जो जानकारी मिली वह यहां उल्लेखनीय है।

वैसे सम्मेलन की रीति-नीति एवं स्थिति से हमने श्री सावरकर को पत्र द्वारा अवगत करा कर हिंदू महासभा की प्रतिष्ठा में सम्मेलन मे नहीं आने का आग्रह किया था। उसका सम्मान करते हुए उन्होंने हमें पत्र द्वारा सूचित किया कि 'मैं वहाँ अंग्रेजी हटाओ सम्मेलन में हिंदू महासभा के अध्यक्ष के नाते नहीं जा रहा हूं।' और अपने इस बयान को निभाते हुए वे इन्दौर हिंदू महासभा के उन नेता कार्यकर्ताओं से मिलने तक नहीं पहुंचे जिन्होंने मुलायमसिंह को काले झण्डे दिखाए थे और इसीलिए उन पर पटवा की भाजपाई सरकार ने डण्डे बरसा कर उन्हें गिरफ्तार कर रखा था।

श्री सावरकर दूरभाष से पूर्वसूचना देकर जब इन्दौर आए तो अंग्रेजी हटाओ का नेता तो छोड़िये एक स्वयंसेवक तक रेल्वे स्टेशन पर नहीं था उनके स्वागत के लिए ! उनके रुकने की व्यवस्था जिस लॉज में की गई थी उस लॉजवाले वे सम्मेलन

(शेष पेज 2 पर)

निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल

नवीनतम शासकीय आंकड़ों के अनुसार भारत में मात्र अंग्रेजी जानने वाले लोगों की संख्या केवल बीस लाख है। 85 करोड़ की जनसंख्या वाले इस जनसंमृद्ध देश में मात्र बीस लाख लोगों की भाषा राष्ट्रीय स्तर पर एक सम्पर्क भाषा के रूप में गोरेवान्वित हैं। कादाचित विश्व में अन्यत्र ऐसा उदाहरण उपलब्ध न हो सकेगा तथापि हम मात्र अंग्रेजी जानने वाले बीस लाख लोगों को इसका भागी बना नहीं सकेंगे। इसलिए कि ऐसे मात्र अंग्रेजी जानने वालों का इस प्रकार का आग्रह कभी सुनाई नहीं पड़ा। तो निश्चय ही स्वाधीन भारत के इस पैंतालिस वर्ष में भी जब संविधान द्वारा मान्यता प्राप्त हिन्दी प्रभावी राष्ट्रभाषा के स्वरूप को प्राप्त न होते हुए अंग्रेजी का जो प्रभुत्व है उसके अपराधी हम करोड़ों भारतीय भाषी नागरिक हैं जो अपनी अपनी मातृभाषा के रुप में तो भारतीय भाषाओं का प्रयोग करते हैं।

परंतु विदेशी दास्ता के संस्कार बंधनों से स्वयं को मुक्त कर नही पाये हैं। साम्प्रति देश में मात्र हिन्दी जानने वालों की संख्या 26 करोड़ से अधिक है और किसी अन्य भारतीय भाषा के साथ ही हिन्दी को मुक्त रुप से अपने व्यवहार में लाने वाले 19 करोड़ लोगों का विचार किया जाये तो भारत में हिन्दी बोलने वालों की संख्या 45 करोड़ से अधिक है। स्पष्ट ही अन्य भाषिकों की संख्या देश में बड़ी होने के उपरान्त भी हिन्दी ही भारत में सर्वाधिक लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषा है।

गांधीजी ने राष्ट्रभाषा के जो पाँच प्रमुख लक्षण बताये हैं उनमें तीसरा लक्षण। उस भाषा का अधिकतर लोगों द्वारा प्रयोग वीर सावरकरजी ने भी हिंदी के राष्ट्रभाषा होने के प्रमाण में यही कहा है कि समग्र रूप में हिन्दी भाषा सम्पुर्ण भारत के बहु-जनसमाज में अन्य किसी भी भाषा से अत्यधिक प्रमाण में बोली जाती है। समझी जाती है और लिखी जाती है।

हिंदी के राष्ट्रभाषा के होने का एक अन्य महत्वपूर्ण तत्व यह भी है कि यह किसी विदेशी, विधर्मो, विजातीय, संस्कृति द्वारा हम पर थोपी नही गई है तो इसी भूमि की प्राचीन सम्पन्न भाषा संस्कृत से इसका उद्भव हुआ है। संस्कृत से प्राकृत भाषाओं के उद्भव का इतिहास लगभग एक सहस्त्र वर्ष तक पीछे जाता है।

वैसे हिंदी भाषारूपी सरस्वती के सुप्त धारा की शोध की जाय तो कुछ आश्चर्यजनक तथ्य इस प्रकार प्रकट होता है कि जैन और बौद्ध मत के प्रचारक जब इनके उदभवस्थल पूर्वी भारत से ठेठ दक्षिणी भारत पहुंचे तो ईसा की द्वितीय शती से छठी शती के उस काल में जैन बौद्ध मत के मूलत: पाली, प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं के साहित्य ने उत्तर तथा दक्षिण में भाषा सेतु का महनीय काम किया। उसी

प्रकार आदि शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, वल्लभाचार्य निम्बार्काचार्य और मध्वाचार्य जैसे आध्यात्मिक चिन्तकों ने देशाटन से भाषाएक्य का सूत्र प्रबल बना। क्या आश्चर्य की शताब्दियोपूर्व दक्षिण की इन महान विभूतियों की विचारधाराओं का निरुपण हिन्दी साहित्य में हुआ।

भारत के लिये एक सम्पर्क भाषा के रूप में अंग्रेजी को अनीवार्य बताने वाले राजनेताओं को यह कौन बताये कि उस प्राचीन काल में दक्षिण द्राविडभाषी जन तीर्थाटन हेंतु अविरत-रुप से उत्तरी भारत आते थे और तत्कालीन प्राकृत भाषाओं के माध्यम से ही उनका संवाद सम्पर्क निर्बाध होता रहता था।

यहाँ तक की मुस्लिम आक्रमण और शासनकाल के आरंभिक दिनों में मुसलमानों ने भी हिन्दी को संपर्क भाषा के रूप में अपनाया। और यह भी इतिहास ही है कि इन्हीं मुस्लिम आक्रान्ताओं के साथ हिंदी तब दक्षिणी हिन्दवी, खड़ी बोली के रुप में दक्षिण में भावाभिव्यक्ति का माध्यम बनी।

हिंदी ही नहीं तो भारत की अन्य प्राकृत भाषाओं पर भी सर्व प्रथम आघात तो तब हुआ जब इस्लामी सत्ता भारत में बध्दमूल होने के साथ ही साम्राज्यवादी अहंकार ने अरबी-फारसी का शस्त्र उठाया और इसी प्रवृति मे अनगिनत बोलियों में होने बाली विभिन्न स्थानीय उर्दुओं ने एक उर्दू भाषा का अधिकार प्राप्त कर लिया। और इस प्रकार सत्ताबल से उर्दू भाषा और अरबी लिपि का बोलबाला सहसा होता चला गया। भले ही उर्दू में इस भूमि के तत्वों के कुछ अंश अवश्य है। तथापि उसके अन्तर में अरबी फारसी की साम्राज्यवादी महजबी प्रवृति प्रबल होने के कारण ही पूर्व में विद्यमान होनेवाली एकता खंडित हुई। ज्ञातव्य है कि उन दिनों भी देश में अनेक प्राकृत भाषाएं एवं बोलियां व्यवहृत थी तथापि भारत के जन-जन में किसी भी प्रकार द्वैतता भाव नहीं था पर मुस्लिम शक्ति के भारत में दृढ-मूल होने के साथ ही मजहब-आधारित पृथक-राष्ट्रीयता का बीजारोपण हुआ और उर्दू ने उस पृथकत्व को शब्दायमान किया। अन्ततोगत्वा मजहबी आधार पर देश का एक भाग इस्लामी राष्ट्र पाकिस्तानी बना और शेष भारत स्वतन्त्र हुआ।

भाषायी आन्दोलन

भारत की एक राष्ट्रीयता की धारणा के अनुसार ही एक राष्ट्रभाषा की भावना भी समय के साथ स्पष्ट हुई। राजा राममोहन राय केशवचन्द्र सेन, बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय आदि ने हिंदी को राष्ट्रभाषा पद पर प्रतिष्ठित करने की भावना को सर्वप्रथम अभिव्यक्ति देकर मानो इस पुनीत घोषणा करने का सम्मान बंगाल को प्राप्त करा दिया।

1905 में नागरी प्रचारिणी भाषा सभा काशी के तत्वाधान में आयोजित सम्मेलन में लोकमान्य तिलक ने हिंदी को राष्ट्रभाषा और देवनागरी लिपि को राष्ट्रलिपि घोषित किया। और इस प्रकार इस राष्ट्र की स्वतन्त्रता को प्राप्त करने हेतु चलायमान संघर्ष में मानो एक उमंग भर दी। 1910 में हिंदी साहित्य सम्मेलन की स्थापना के साथ ही राष्ट्रभाषा और राष्ट्रलिपि की प्रतिष्ठापना हेतु संगठित प्रयास आरम्भ हुए।

1918 में गांधीजी की अध्यक्षता में इन्दौर में सम्पन्न हिंदी साहित्य सम्मेलन के आठवें अधिवेशन के साथ ही दक्षिणी भारत में हिंदी प्रसार यज्ञ का शुभारम्भ हुआ। 1937में सर्वपल्ली राजगोपालचारी का अन्तरिम शासन जब तमिलनाडु अर्थात तत्कालीन मद्रास प्रांत में था तब उन्होंने पुरे प्रांत में माध्यमिक स्तर तक विद्यालयों में हिंदी को अनिवार्य विषय बना दिया था।

इस प्रकार तब राष्ट्रभाषा का रथ अबाध गति से दौड़ रहा था। दाल में काला तब उजागर हुआ जब देश के स्वतन्त्र हो जाने पर संविधान की सभा की राष्ट्रभाषा की समिति की बैठक में 12 दिसम्बर 1949 को राजभाषा के प्रश्न पर हुए मतदान में हिंदी के पक्ष-विपक्ष में समान मत आने पर डा. राजेन्द्रप्रसाद के अध्यक्षीय मत से हिंदी की विजय हो पाई।

वैसे 1944 में तमिलनाडु में ई.पी. रामस्वामी नायकर जो मूलत: हिंदी समर्थक और सेवक थे के द्वारा द्रविड़ कषगम पार्टी का गठन और उसके तत्वाधान 'रेस्पेक्ट मूवमेंट' चलाकर पहली बार हिंदी-विरोध का शंखनाद किया। इस हिंदी विरोध के पीछे नायकर का तर्क यह था हिंदी के प्रबल होने से दक्षिण पर ब्राह्मणों और उत्तर भारतीयों का शासन हो जायेगा।

सी.एन. अन्नादुराई ने तो हिंदी विरोध को ही प्रमुख सवाल बनाते हुए द्रविण कषगम से अलग द्रविण मुनेत्र कषगम की स्थापना की थी और दक्षिणीभारत विशेष कर तमिलनाडु में हिंदी विरोध प्रबलतम हो गया था फिर भी संविधान समिति में जो स्थिति उजागर हुई वह अकल्पनीय थी।

हमारे संविधान के भाग 17 अनुच्छेद 343 में हिंदी को राजभाषा मानते हुए यह निश्चय किया गया कि हर पांच वर्ष में एक-एक आयोग इस तरह तीन आयोग बनाकर1965तक हिंदी और अंग्रेजी का समानान्तर स्वरूप चलाते हुए उस वर्ष अग्रेजीको बिदा किया जाये।

पर लगता है सहेतुक रूप से ढील दी गई और 1963 में एक नवीन राजभाषा विधेयक के माध्यम से यह निर्णय किया गया कि जब तक हिंदी अंग्रेजी का स्थान लेने सक्षम नहीं होती अंग्रेजी चलती रहेगी और 1967 में राजभाषा विधेयक में एक संसोधन के द्वारा यह प्रवधान कर दिया कि जब तक एक भी अहिन्दी भाषा राज्य चाहेगा संघ शासन का कार्य अंग्रेजी से चलता रहेगा। इस प्रकार जनतन्त्र की घुमावदार गलियों में हिंदी को घुमाफिराकर लगता है मूलस्थान पर पहुंचाने की चेष्टाएं चल रही हैं।

हिंदी के साथ इस तरह का खिलवाड़ राजनीति द्वारा किया जा रहा है तो स्वयं को हिंदी सेवी कहलाने वालों को हर वर्ष 14 सितम्बर को हिंदी दिवस समारोहित करने वालों, हिंदी के नाम पर अपना सम्मान कराने वालों और अनेक उपलब्धियां प्राप्त करने वालों ने भी हिंदी के प्रति अपना दायित्व नहीं निभाया।

परिणामत: एक समय हिंदी का बना माहौल अब जाता रहा है। नवीन पीढ़ियाँ स्वार्थवश अंग्रेजी की ओर पग बढ़ा रही है। अपने बालकों को पब्लिक स्कूल में भर्ती करवाकर उच्चपद पर शासकीय अधिकारी बनाने के स्वप्न देख रही है। अंग्रेजी बोलना सिखाने के पाठ्यक्रम में भर्ती करवाकर विदेशों में प्रतिभा आप्रवास में सहयोग कर रही है। अपनी रानी बिटिया को गुलाब को पिंकी गुड़िया को डली,सोनिया को गोल्डी बनाकर स्वयं को मम्मी-पापा बना रही है

दाम्पत्यसूत्र में बंधने के पवित्र संस्कार के अवसर हेतु परिजन स्नेहीजनों को मैरिज इनविटेशन कार्ड भेज रही हैं भवन संकुल और बाजार आदि धड़ल्ले से प्लाजा और सेन्टर कहलाए जा रहे हैं। मात्र अंग्रेजों ही नही तो अरबी फारसी का छद्म आक्रमण उर्दू हिन्दुस्तानी के माध्यम से इस प्रकार हो रहा हैं कि देश की तोपखाना वाहिनी का सम्मानवाक्य है। सर्वत्र इज्जत

(शेष 2 पेज पर)

आगामी अंक में

- हे राम ! तुम ही जानत पीर हमारी ! लेखमाला की चौथी और अन्तिम कड़ी-- लहरें नवसृष्टि का निर्माण नहीं करती !
- २३ अगस्त को, लोकसभा में शासन के द्वारा प्रस्तुत उपासना स्थल (विशेष प्रबन्ध) विधेयक १९९१ के हिन्दी अनुवाद के मुख्यांश।

पा. हिन्दु अस्मिता-सम्पादक, स्वामी विक्रम गणेक ओक (विक्रमसिंह) प्राध्यापक द्वारा विश्वास कमर्शियल एजेन्सी, 55/2, माली मोहल्ला, इन्दौर से मुद्रित एवं 'अभिनव भारत प्रकाशन' 16, एम. आय. जी. (शाप कम रेसीडेन्स) नन्दानगर मेनरोड, इन्दौर मध्यप्रदेश, 452008 से प्रकाशित। दूरभाष : 37948